नदियों के कार्य

- भूतल के अपरदन एवं समतल स्थापना के अभिकर्त्ता के रूप में नदियों का महत्त्व सबसे अधिक है। नदियाँ जल को प्रवाहित कर अपने उद्‌गम स्थान से लेकर ढालों के अनुरूप बहती हैं।

◆ नदी-घाटी

- नदी-घाटी को उद्‌गम से मुहाने तक तीन भागों में बाँटा जा सकता है—
  1. ऊपरी या पहाड़ी भाग
  2. मध्य या मैदानी भाग
  3. निम्न या डेल्टाई भाग
- ये तीनों भाग नदी की तीन अवस्थाओं के द्योतक हैं।

1. नदी के पहाड़ी या ऊपरी भाग में पाई जाने वाली विशेषताएँ हैं—
- ❑ नदी का तीव्र गति से बहना।
- ❑ तीव्र ढाल होने के कारण गहराई में अधिक कटाव, जिससे V-आकार की घाटी का निर्माण होता है।
- ❑ कड़ी और मुलायम चट्टानों के पाए जाने पर जलप्रपात का निर्माण, जिसमें जल ऊपर से नीचे खड़ी धार में गिरता है।

2. नदी के मैदानी या मध्य भाग में पाई जाने वाली विशेषताएँ हैं—
- ❑ नदी का वेग कम हो जाना (भूमि की ढाल अपेक्षाकृत कम हो जाने के कारण)।
- ❑ तली या गहराई में कटाव कम होना और कगारों की ओर कटाव बढ़ना, फलत: नदी-घाटी का चौड़ा होना ।
- ❑ पहाड़ी भागों से लाये गए जलोढ़ को ढोना और जलोढ़-पंखों का निर्माण, अर्थात् जलोढ़ का निक्षेपण भी।
- ❑ मोड़दार घुमावों (विसर्प) का बनना।
- ❑ बाढ़ के मैदान का निर्माण।

3. नदी के निम्न भाग में पाई जाने वाली विशेषताएँ हैं—
- ❑ नदी की गति अत्यंत मंद पड़ जाना, अत: निक्षेपण की प्रधानता।
- ❑ नदी का अनेक धाराओं में विभक्त होकर बहने लगना।
- ❑ डेल्टा का निर्माण (ज्वार-भाटा का प्रभाव होने पर डेल्टा का न बनना)।
- ❑ डेल्टा भाग में झीलों और दलदली भूमि का पाया जाना।

नोट :
- ■ **डेल्टा का निर्माण** होने के लिए आवश्यक है कि नदी के सागर तक पहुँचने से पहले उसका वेग अत्यधिक कम हो जाए। परंतु कई नदियाँ सागर तट के निकट तीव्र गति से बहती हुई सागर में गिरती है। ऐसी नदियाँ अपनी घाटी को समुद्र की पेंदी पर भी गहरा कर देती है। इस प्रकार की घाटियों को **एस्चुरी (Estuary)** कहा जाता है।

वायुमण्डल

- पृथ्वी के चारों ओर व्याप्त गैसीय आवरण को वायुमण्डल (Atmosphere) कहते हैं। वायुमण्डल में प्रतिरोधात्मक शक्ति होने के कारण अंतरिक्ष से पृथ्वी की ओर आने वाले उल्का आदि आकाशीय पिंड धरातल पर पहुँचने से पूर्व ही नष्ट हो जाते हैं।
- वायुमण्डल पृथ्वी के वातावरण के लिए **'ग्रीन हाउस प्रभाव'** या विशाल काँचघर की तरह काम करता है जो सौर विकिरण की लघु तरंगों को तो पृथ्वी तक आने देता है पर पृथ्वी द्वारा विकसित दीर्घ तरंगों को बाहर जाने से रोकता है।
- इसके कारण पृथ्वी का औसत तापमान 15° सेल्सियस तक बना रहता है अन्यथा यहाँ भी चंद्रमा की तरह दिन में 100° सेल्सियस तापमान और रात में -100° सेल्सियस तापमान पाया जाता।
- वायुमण्डल अनेक गैसों का मिश्रण है—

नाइट्रोजन	78.09%
ऑक्सीजन	20.95%
आर्गन	0.93%
कार्बन डाइ-ऑक्साइड	0.04%
हाइड्रोजन	0.01%

(अन्य गैसें हैं—नियॉन, हीलियम, ओजोन, क्रिप्टॉन, जेनान, आदि)

- वायुमण्डल का 99 प्रतिशत भाग नाइट्रोजन और ऑक्सीजन से निर्मित है। वायुमण्डल के निचले हिस्से में भारी गैसें, जैसे—कार्बन डाइ-ऑक्साइड, ऑक्सीजन तथा नाइट्रोजन पाई जाती हैं। ये सक्रिय गैसें हैं। दूसरी तरफ नियॉन, क्रिप्टॉन, हीलियम जैसी हल्की तथा निष्क्रिय गैसें अधिक ऊँचाई पर विस्तृत हैं।

◆ वायुमण्डल के प्रमुख अवयव

नाइट्रोजन

- इसकी प्रतिशत मात्रा सभी गैसों से अधिक है। नाइट्रोजन की उपस्थिति के कारण ही वायुदाब, पवनों की शक्ति तथा प्रकाश के परावर्तन का आभास होता है। नाइट्रोजन का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह वस्तुओं को तेजी से जलने से बचाती है। यदि वायुमण्डल में नाइट्रोजन न होती तो आग पर नियंत्रण रखना कठिन हो जाता। नाइट्रोजन से पेड़-पौधों में प्रोटीनों का निर्माण होता है जो भोजन का मुख्य अंग है। ज्ञातव्य है कि इस स्वतन्त्र वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का लैग्यूमिनस पौधे तथा शैवाल आदि प्रजातियाँ मृदा में स्थरीकरण (Nitrogen Fixation) करती हैं।

ऑक्सीजन

- यह जन्तुओं तथा मनुष्यों के लिए प्राणदायिनी गैस होती है। ध्यातव्य है कि हरे पौधे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में वायुमण्डल में विशुद्ध ऑक्सीजन विमुक्त करते हैं।

कार्बन डाइऑक्साइड

- यह मौसम विज्ञान की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण गैस है, क्योंकि यह सौर विकिरण के लिए पारदर्शी, लेकिन पार्थिव विकिरण के लिए अपारदर्शी है। CO_2 का जब वायुमण्डल में सान्द्रण बढ़ जाता है तो अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।
- दो प्रमुख कारणों के फलस्वरूप वायुमण्डल में CO_2 की मात्रा तेजी से बढ़ती जा रही है—(i) बढ़ती दर से जीवाश्म के दहन के कारण CO_2 का अधिकाधिक मात्रा में वायुमण्डल में विमोचन तथा (ii) तीव्र गति से वन विनाश के कारण वन क्षेत्रों में ह्रास होने के कारण CO_2 के उपयोग में निरन्तर कमी।
- वायुमण्डल में CO_2 के सान्द्रण में वृद्धि होने से **हरितगृह प्रभाव (Green-house Effect)** में वृद्धि होती है, जिस कारण निचले वायुमण्डल एवं धरातलीय सतह के तापमान में वृद्धि होती है। ज्ञातव्य है कि **क्योटो प्रोटोकोल (1997 ई.)** के द्वारा इसकी मात्रा में कमी किए जाने के बारे में वैश्विक सहमति बनी।

ओजोन

- मौसम की दृष्टि से ओजोन वायुमण्डल का दूसरा महत्त्वपूर्ण घटक है। यद्यपि वायुमण्डल में इसकी मात्रा बहुत कम पायी जाती है किन्तु सूर्य से निकलने वाली हानिकारक पराबैंगनी किरणों के अवशोषक गुण के कारण यह अति महत्त्वपूर्ण है।
- यह पृथ्वी की सतह से 25 से 30 किमी. की ऊँचाई के बीच पायी जाती है। सुपरसोनिक जेट विमानों से निकली हुई नाइट्रोजन ऑक्साइड और एयरकण्डीशनर, रेफ्रिजरेटर आदि से निःसृत क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) इसकी परत को काफी क्षति पहुँचा रहे हैं। स्मरणीय है कि ओजोन परत के क्षरण को बचाने के लिए ही **1987 में मॉन्ट्रियल प्रोटोकाल** पर सहमति बनी।

जलवाष्प

- वायुमण्डल में इसकी मात्रा तापाधारित होती है। सामान्यत: यह 0 से 4% तक पायी जाती है। गर्म तथा आर्द्र उष्ण कटिबन्ध में यह हवा के आयतन का 4% होती है, जबकि ध्रुवों जैसे ठण्डे तथा रेगिस्तानों जैसे शुष्क प्रदेशों में यह हवा के आयतन के 1% भाग से भी कम होती है।
- जलवाष्प के बारे में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि वायु के तापमान में वृद्धि के साथ वायु की जलवाष्प ग्रहण क्षमता बढ़ती है।
- विषुवत् वृत्त से ध्रुव की तरफ जलवाष्प की मात्रा कम होती जाती है। भूतल से 5 किमी. तक वायुमण्डल में समस्त वाष्प का 90% भाग पाया जाता है।
- जलवाष्प सूर्य से आने वाले सूर्यताप के कुछ अंश को अवशोषित कर लेता है और धरातल पर पहुँचने वाली इसकी मात्रा को कम कर देता है। यह पृथ्वी द्वारा विकसित गर्मी को भी संजोए रखता है। अत: यह एक कंबल का काम (Insulation) करता है जो पृथ्वी को न अत्यधिक गर्म होने देता है और न ही अत्यधिक ठंडा।
- वाष्प के कारण ही सभी प्रकार के संघनन एवं वर्षण तथा उनके विभिन्न रूप, यथा—बादल, तुषार, जलवृष्टि, हिम, ओस एवं ओला आदि का सृजन होता है। ज्ञातव्य है कि वायुमण्डल में समस्त जलमण्डल का 0.001% भाग सुरक्षित रहता है।

नोट :

- पृथ्वी के धरातल पर पाए जाने वाले तापमानों पर जल ही एक ऐसा पदार्थ है जो ठोस, तरल और गैसीय तीनों अवस्थाओं में रह सकता है। जल, जब एक अवस्था से दूसरी अवस्था में बदलता है तब या तो यह ऊष्मा ग्रहण करता है या ऊष्मा का त्याग करता है, जिसे **गुप्त ऊष्मा** कहते हैं।
- वाष्पीकरण की प्रक्रिया में जलवाष्प ऊष्मा ग्रहण करता है। पवन इस ऊष्मा को जलवाष्प के साथ ही एक जगह से दूसरी जगह पर स्थानान्तरित करता रहता है। दूसरी जगह पर संघनन और वृष्टि की प्रक्रिया में यह गुप्त ऊष्मा निकल जाती है। संघनन में त्यागी गई गुप्त ऊष्मा की मात्रा वाष्पीकरण के समय में ग्रहण की गई मात्रा के लगभग बराबर होती है। अत्यधिक मात्रा में इस गुप्त ऊष्मा के निकलने से उष्ण कटिबंधीय चक्रवात तथा गर्जन भरे तूफान से युक्त भयंकर मौसम उत्पन्न होते हैं। हवा में संतुलन और असंतुलन की दशाएँ बहुत हद तक जलवाष्प की क्रियाशीलता पर निर्भर करती है।

धूलकण

- यह वायुमण्डल की निचली परतों में तैरते रहते हैं। ध्रुवीय और विषुवतीय प्रदेशों की अपेक्षा उपोष्ण तथा शीतोष्ण क्षेत्रों में धूल के कणों की मात्रा अधिक होती है। शुष्क और तेज पवन वाले मौसम में अधिक धूल के कण वायुमण्डल में प्रवेश करते हैं।
- धूलकणों का जलवाष्प की दृष्टि से बहुत अधिक महत्व है, और ये विकिरण के कुछ भाग को सोखते हैं तथा उनका परावर्तन व प्रकीर्णन भी करते हैं जिसके कारण ऊषा काल (Dawn) एवं गोधूलि (Twilight) की तीव्रता तथा उनकी अवधि निर्धारित होती है। इनके द्वारा वरणात्मक या चयनात्मक प्रकीर्णन से आकाश नीला तथा सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय लाल दिखता है।
- धूलकण जलवाष्प के लिए जलग्राही नाभिकों (hygroscopic nuclei) की तरह कार्य करते हैं। इस प्रक्रिया से बादल बनते हैं और वर्षा होती है।

वायुमण्डल की परतें

◆ क्षोभमण्डल (Troposphere)

- यह पृथ्वी की सतह के सबसे नजदीक होती है। इसकी ऊँचाई विषुवत् रेखा (16 किमी.) से ध्रुवों (8 किमी.) की ओर जाने पर घटती है। यह अन्य सभी परतों से घनी है और यहाँ पर जलवाष्प, धूलकण, आर्द्रता आदि मिलते हैं। मौसम संबंधी अधिकांश परिवर्तनों के लिए क्षोभमण्डल ही उत्तरदायी है।
- वायुमण्डलीय जलवाष्प एवं धूलकणों के अधोमण्डल में ही संकेंद्रित होने के कारण बादल तथा तूफान आदि की उत्पत्ति इसी परत में होती है। इसी कारण विमान चालक इस मण्डल में वायुयान चलाना पसंद नहीं करते हैं।
- इस परत में ऊँचाई के साथ-साथ तापमान घटता है। **प्रत्येक 165 मीटर पर 1°C तापमान की कमी हो जाती है।** इसे **सामान्य ताप ह्रास दर** (Normal Lapse Rate of Temperature) कहते हैं। तापह्रास दर केवल ऊँचाई से ही नहीं, बल्कि अक्षांशों से भी प्रभावित होती है। यह दर उच्च तापमान वाले धरातल के ऊपर उच्च तथा निम्न तापमान वाले धरातल के ऊपर निम्न होती है।
- क्षोभमण्डल के ऊपरी शीर्ष भाग पर स्थित 'संक्रमण स्तर', जो क्षोभमण्डल को समताप मण्डल से पृथक् करता है, क्षोभमण्डल सीमा (Tropopause) कहलाता है। विषुवत् वृत्त के ऊपर क्षोभ सीमा में हवा का तापमान – 80° से. और ध्रुव के ऊपर – 45° से. होता है।

◆ समताप मण्डल (Stratosphere)

- इसकी ऊँचाई 50 किमी. तक होती है। इस मण्डल की विशेष बात यह है कि इसमें ऊँचाई में वृद्धि के साथ तापमान का नीचे गिरना समाप्त हो जाता है। इस परत के निचले हिस्से में विभिन्न ऊँचाइयों पर एक समान तापमान पाया जाता है। साथ ही समताप रेखाएँ समानांतर न होकर लंबवत् होती हैं। वायुमण्डल की यह स्थिति वायुयान चालकों के लिए आदर्श होती है।
- इस परत के ऊपरी भाग में ऊँचाई के साथ तापमान में वृद्धि होती है और उसका कारण होता है—ओजोन परत द्वारा पराबैंगनी किरणों का अवशोषण।
- इस मण्डल में जलवाष्प एवं धूलकण लगभग नहीं पाए जाते हैं। अत: यहाँ बादलों का निर्माण नहीं होता है। पर कभी-कभी कुछ विशेष प्रकार के बादलों का निर्माण होता है जिन्हें मुक्ताभ मेघ (mother of pearl clouds) कहते हैं।
- इस मण्डल की बाह्य सीमा को समताप सीमा (Stratopause) कहते हैं, जहाँ तापमान 0°C या 32°F होता है।

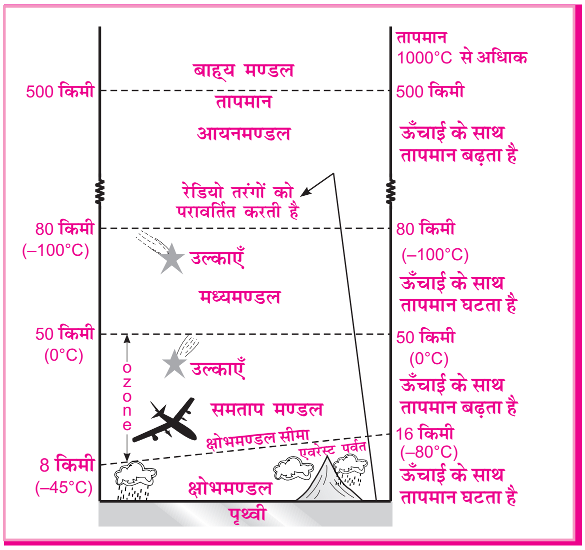

वायुमण्डल की परतें

ध्रुवीय ज्योति (Aurora)

- ध्रुवीय ज्योति उच्च अक्षांशीय ध्रुवीय तथा उपध्रुवीय प्रदेशों की एक महत्वपूर्ण घटना है। उच्च अक्षांशों में रात में आकाश में रंग-बिरंगा प्रकाश नजर आता है। यह प्रकाश कभी-कभी घूमती हुई प्रकाश किरणों के रूप में भी देखा जाता है। इसकी उत्पत्ति सूर्य से आने वाले आवेशित कणों के पृथ्वी की ओर आने के कारण चुंबकीय क्षेत्र में 100 किमी ऊँचाई पर होती है।
- यह लक्षण सौर कलंकों (Sun Spots) की अधिकता की अवधि में अधिक प्रबल होता है। सौर कलंक सूर्य के तल पर पाए जाने वाले धब्बों को कहते हैं। इन धब्बों का 11 सालों का एक चक्र होता है। जब सूर्य के तल पर उपस्थित धब्बे अत्यधिक बड़े होते हैं तथा इनकी संख्या अधिकतम होती है तब ध्रुवीय ज्योति, उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में उच्च अक्षांशों पर दिखाई देती है।
- जो ध्रुवीय ज्योति उत्तरी गोलार्द्ध में दिखाई देती हैं उन्हें **Aurora Borealis** कहते हैं। इसके विपरीत दक्षिणी गोलार्द्ध में इन्हें **Aurora Australis** कहते हैं।
- ध्रुवीय ज्योति का सौर गतिविधियों के साथ व्युत्क्रम संबंध है। ध्रुवीय ज्योति, ध्रुवों से 20° तक के क्षेत्रों, जैसे उत्तरी कनाडा, उत्तरी रूस और ग्रीनलैंड में दिखाई देती हैं।
- जब सौर पवनें सूर्य में उपस्थित धब्बों से निकलने वाले उच्च ऊर्जा कणों को लेकर पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश करती हैं, तो अधिक ऊर्जा वाले इन कणों का गैसों के अणुओं के साथ टकराव होने पर विद्युत-चुंबकीय विकिरण उत्सर्जित होने से ध्रुवीय ज्योति की उत्पत्ति होती है।

- **ओजोन मण्डल (Ozonosphere)**—समताप मण्डल में 25 किमी. से 30 किमी. के बीच ओजोन गैस का मण्डल होता है।
- ओजोन गैस सूर्य की पराबैंगनी किरणों (Ultra-violet rays) को अवशोषित करती है।

◆ मध्यमण्डल (Mesosphere)

- समतापमण्डल के ऊपर मध्यमण्डल है जिसका विस्तार 80 किमी. तक है। इस परत में ऊँचाई के साथ तापमान पुन: घटने लगता है और 80 किमी. की ऊँचाई पर तापमान -100°C रहता है। इस न्यूनतम तापमान की सीमा को मेसोपॉस (Mesopause) कहते हैं जिसके ऊपर जाने पर तापमान में पुन: वृद्धि होती जाती है।

◆ आयनमण्डल या तापमण्डल (Thermosphere or Ionosphere)

- मध्यमण्डल के ऊपर आयनमण्डल है जिसकी पृथ्वी सतह से ऊँचाई 500-600 किमी. तक है। इस परत में ऊँचाई के अनुसार ताप बढ़ता जाता है (500°–2000° C की रेंज)।
- तापमण्डल में वायुमण्डलीय गैसों की विरलता है फलत: इसमें से होकर सौर पवन (solar wind) के प्रोटोन्स आसानी से गुजरते हैं। ये प्रोटोन्स वायु के अणुओं से टकराकर उनकी गति को कम कर देते हैं। इससे इस मण्डल में तापमान बढ़ने लगता है। साथ ही सौर पवन द्वारा अणुओं से इलेक्ट्रॉन्स के पृथक्कीकरण से आयन्स (ions) का निर्माण होता है। इसीलिए इसे आयनमण्डल कहते हैं। इस परत से रेडियो तरंगों का परावर्तन होता है।
- आयनीकरण की प्रक्रिया उच्च अक्षांशों में सर्वाधिक प्रभावशाली होती है, क्योंकि आयनीकृत कण पृथ्वी के चुंबकीय क्षेत्रों के कारण ध्रुवों की ओर आकर्षित होते हैं। जब ये आयन्स अपने इलेक्ट्रॉन्स के साथ पुन: संयुक्त हो जाते हैं तब फोटोंस (Photons) का निर्माण होता है। यह फोटोंस ही ध्रुवीय ज्योति (या ध्रुवीय प्रकाश) (Aurora) को जन्म देते हैं।
- आसमान से पृथ्वी की ओर गिरने वाले उल्कापिंड (Meteors) इस मण्डल में आकर जल जाते हैं। इस प्रकार यह पृथ्वी की उल्काओं आदि से भी रक्षा करता है।

◆ बहिर्मंडल (Exosphere)

- यह वायुमण्डल की सबसे ऊपरी परत है। बहिर्मंडल की बाह्य सीमा अनिश्चित है। इसे अंतरिक्ष व पृथ्वी के वायुमण्डल की सीमा माना जा सकता है। इसके बाद अंतरिक्ष का विस्तार है। इसमें हाइड्रोजन व हीलियम गैसों की प्रधानता है।
- ऊँचाई के साथ आयनीकृत अणुओं में वृद्धि होती जाती है। इसकी ऊपरी सतह में अत्यधिक आयनीकृत अणुओं की दो परतें पाई जाती हैं जो 'वॉन ऐलेन की विकिरण परत' (Van Allen's Radiation Belts) कहलाती हैं।
- इनमें से निचली पेटी, धरातल से लगभग 2600 किमी की ऊँचाई पर पाई जाती है और ऊपरी पेटी 13,000 से 19,000 किमी की ऊँचाई पर स्थित है।

सूर्यताप एवं तापमान

- पृथ्वी को प्राप्त होने वाले ताप का स्रोत सूर्य है। अन्य तारों या आकाशीय पिंड या स्वयं पृथ्वी के भीतर से प्राप्त ऊष्मा पृथ्वी पर जीवन के विकास या जलवायु की दृष्टि से महत्वहीन है।
- सूर्य एक दहकता हुआ विशालकाय पिंड है जिससे विकरित संपूर्ण ऊष्मा को सौर विकिरण (solar radiation) कहा जाता है। पृथ्वी इस ऊष्मा का मात्र 2 अरबवाँ भाग प्राप्त कर पाती है, लेकिन सूर्यताप का

यही सूक्ष्म अंश पृथ्वी की सभी भौतिक, जैविक एवं रासायनिक घटनाओं के लिए पर्याप्त है। यह सूक्ष्मांश भी लगभग 23 खरब अश्व शक्ति के बराबर है।

- सूर्य से विकीर्ण ऊर्जा का जो भाग पृथ्वी की ओर आता है उसे 'आतपन' या 'सूर्यताप' (insolation) कहते हैं। सूर्यताप की प्राप्ति विभिन्न लंबाइयों वाली तरंगों (wavelengths) या सूर्य रश्मियों के रूप में होती है।
- सूर्य से उत्सर्जित होने वाली ऊर्जा में विभिन्न लंबाई वाली पराबैंगनी (Ultraviolet), दृश्य-प्रकाश (Visible), अवरक्त (Infra-red) आदि होती हैं। इनमें से दृश्य-प्रकाश तरंगें (लाल, नीली, हरी, पीली) पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यधिक महत्व की हैं। पृथ्वी की सतह पर उगने वाले सभी पेड़-पौधे इस प्रकाशीय ऊर्जा को भोज्य ऊर्जा में परिवर्तित कर खाद्य पदार्थों का निर्माण करते हैं।
- पृथ्वी सतह पर कोई भी स्थान सूर्यताप की समान मात्रा ग्रहण नहीं करता है। भूमध्यरेखीय क्षेत्रों में तापमान अधिक होने और ध्रुवों की ओर इसके क्रमश: घटने का मुख्य कारण विभिन्न अक्षांशों पर सूर्यताप की मात्रा में अंतर होना है।
- हालाँकि तापमान को नियंत्रित करने में अक्षांश ही अकेला कारक नहीं है। यदि ऐसा होता तो किसी एक अक्षांश पर स्थित सभी स्थानों का तापमान बराबर होता। वास्तव में स्थल और जल के गर्म होने की दर में भिन्नता, प्रचलित पवन, समुद्री धाराएँ, समुद्र तल से ऊँचाई, स्थल ढाल की तीव्रता और सूर्य के संदर्भ में ढाल की दिशा तथा मिट्टी में उपस्थित जल, आदि के कारण भी तापमान के वितरण में विषमताएँ मिलती हैं।

पृथ्वी का ऊष्मा बजट
(Heat Budget of the Earth)

- पृथ्वी ऊष्मा का न तो संचय करती है न ही ह्रास। यह अपने तापमान को स्थिर रखती है। ऐसा तभी सम्भव है, जब सूर्य विकिरण द्वारा सूर्याताप के रूप में प्राप्त ऊष्मा एवं पार्थिव विकिरण द्वारा अन्तरिक्ष में संचरित ताप बराबर हों। इस संतुलन को ही ऊष्मा बजट कहते हैं।
- वायुमण्डल की ऊपरी सतह पर प्राप्त होने वाली सौर विकिरण में से 35% (यानि 100 में से 35 इकाइयाँ) पृथ्वी के धरातल पर पहुँचने से पहले ही अंतरिक्ष में परावर्तित हो जाता है। सौर विकिरण के इस परावर्तित समानुपात को ही पृथ्वी का एल्बिडो (Albedo) कहते हैं। इस एल्बिडो के कारण ही पृथ्वी, चंद्रमा या किसी उपग्रह से देखे जाने पर, चमकीला तारा जैसा दिखाई देता है।
- प्रथम 35 इकाइयों को छोड़कर शेष 65 इकाइयों में से 14 वायुमण्डल में तथा 51 पृथ्वी के धरातल द्वारा अवशोषित होती हैं। धरातल द्वारा अवशोषित इन 51 इकाइयों द्वारा ही वह गर्म होता है।
- सौर ऊर्जा के अवशोषण से गर्म होने के पश्चात धरातल दीर्घ तरंगों के रूप में ऊर्जा का विकिरण करने लगता है। इसे **पार्थिव विकिरण** कहते हैं।
- इस प्रकार 51 इकाई ऊर्जा पृथ्वी द्वारा वायुमण्डल में पार्थिव विकिरण के रूप में छोड़ी जाती है, जिसमें से 34 इकाई वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन डाईऑक्साइड और जलवाष्प द्वारा अवशोषित कर ली जाती हैं और शेष 17 इकाई ऊर्जा पुन: अंतरिक्ष में वापिस कर दी जाती है। इस प्रकार वायुमण्डल कुल 48 इकाई ऊर्जा (14 + 34) प्राप्त करता है तथा इस सारी ऊर्जा को अंतरिक्ष में विकिरित कर देता है। इस प्रकार कुल 100 यूनिट ऊर्जा की हानि होती है जिसमें पार्थिव विकिरण और वायुमण्डल द्वारा किए जाने वाले परावर्तन का भी योगदान है।
- कुल प्राप्त सूर्यताप और कुल बहिगार्मी विकिरण की मात्रा के अन्तर को शुद्ध विकिरण (Net Radiation) कहते हैं। यद्यपि सम्पूर्ण पृथ्वी का शुद्ध विकिरण शून्य है तथापि यह 40° उत्तर से 40° दक्षिणी अक्षांशों के बीच धनात्मक तथा इन अक्षांशों से ध्रुवों के बीच ऋणात्मक होता है।

नोट :

- पृथ्वी पर अक्षांशीय ताप-संतुलन ऊष्मा के स्थानांतरण द्वारा संभव हो पाता है। इसके दो कारक जिम्मेदार हैं। पहला, वायु परिसंचरण तंत्र (यानि पवनें) और दूसरा महासागरीय जलधाराएँ, जिनके कारण असमान तापमान वाले कटिबंधों के बीच लगातार ऊष्मा का स्थानांतरण और आदान- प्रदान होता रहता है। इसी कारण 35°-40° अक्षांश से लेकर 0° अक्षांश पर सौर विकिरण से ऊर्जा क्षति की तुलना में ऊर्जा प्राप्ति ज्यादा होती है, जबकि 40° से 90° अक्षांशों तक ऊर्जा प्राप्ति की तुलना में क्षति अधिक होती है।
- अक्षांशीय ताप संतुलन प्रक्रिया के द्वारा उष्ण कटिबंधों के तापमान में न तो लगातार वृद्धि होती है न ही ध्रुवों के तापमान में कमी होती है, फलतः ताप-संतुलन बना रहता है।
- दिन में पृथ्वी सूर्य से ऊर्जा प्राप्त करती है, जिसका ऊष्मा में रूपान्तरण होता रहता है। दिन के 12 बजे के समय पृथ्वी सर्वाधिक सौर ऊर्जा प्राप्त करती है, परन्तु उस समय अधिकतम तापमान नहीं हो पाता है, क्योंकि ऊर्जा के ऊष्मा में रूपान्तरित होने के लिए कुछ समय लगता है। सूर्य की विकिरण से प्राप्त ऊष्मा पृथ्वी द्वारा मुक्त ऊष्मा से निरन्तर बढ़ती जाती है, जिस कारण 6 बजे प्रातः से 2 बजे दिन तक तापमान का वक्र सतत् उठता जाता है और अधिकतम तापमान 2 बजे प्राप्त होता है। इसे दिन का उच्चतम तापमान कहते हैं।

ग्रीनहाउस प्रभाव और ग्लोबल वार्मिंग

- ग्रीनहाउस अथवा हरितगृह एक प्रकार का काँच जैसे पारदर्शी पदार्थो से बना ढाँचा होता है जो कि उष्णकटिबंधीय पौधों को ठंडे जलवायु वाले क्षेत्रों में उगाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इनकी संरचना की मुख्य विशेषता यह होती है कि लघु तरंग सौर विकिरण तो इसमें प्रवेश कर सकता है परन्तु यह पृथ्वी द्वारा विकिरित दीर्घ तरंगों को वापिस नहीं जाने देता है जिस कारण इस ढाँचे के अंदर का तापमान बाहरी तापमान की अपेक्षा ऊँचा बना रहता है।
- वायुमण्डल भी काफी हद तक इसी प्रकार का व्यवहार दर्शाता है। पृथ्वी का वायुमण्डल **लघु तरंग** सौर विकिरण को पृथ्वी तक आने देता है परंतु पृथ्वी से होने वाले **दीर्घ तरंग** पार्थिव विकिरण को अवशोषित कर लेता है। वायुमण्डल के इस व्यवहार के कारण इसके तापमान में सतत् वृद्धि होती रहनी चाहिए।
- परन्तु वास्तव में वायुमण्डल का तापमान लगभग स्थिर रहता है और यह तापीय समता ऊष्मा बजट के माध्यम से संभव होती है।
- धरातल की ही भाँति वायुमण्डल भी एक ताप अवशोषक तथा विकिरणकर्ता की भूमिकाएँ निभाता है और सूर्य से प्राप्त लघु तरंग विकिरण तथा पृथ्वी से प्राप्त दीर्घ तरंग विकिरण के रूप में प्राप्त समस्त ऊर्जा का विकिरण अंतरिक्ष को कर देता है।
- वायुमण्डल अपनी अधिकांश ऊष्मा दीर्घ तरंग **पार्थिव विकिरण** के रूप में प्राप्त करता है। अधिकांश पार्थिव विकिरण का अवशोषण वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन डाईऑक्साइड तथा जलवाष्प द्वारा किया जाता है। यदि वायुमण्डल में इन तत्वों की मात्रा में वृद्धि हो जाए, तो ऊष्मा का अधिक अवशोषण करने के कारण वायुमण्डल के तापमान में वृद्धि हो जाएगी। इस प्रकार ऊष्मा अवशोषित करने वाले तत्वों की मात्रा में तथा इसके परिणामस्वरूप तापमान में वृद्धि को ग्रीनहाउस प्रभाव कहा जाता है। इसी प्रभाव के कारण मेघ आच्छादित रातें गर्म होती हैं। वायुमण्डल में बादलों की उपस्थिति धरातल तथा वायुमण्डल से ऊर्जा ह्रास में बाधक होती है। वायुमण्डल में उपस्थित कार्बन डाईऑक्साइड पार्थिव विकिरण द्वारा प्राप्त ऊष्मा का अवशोषण करती है। जीवाश्म ईंधनों को अधिक मात्रा में जलाने से कार्बन डाईऑक्साइड गैस मुक्त होती है जिससे वायुमण्डल में इसकी मात्रा में वृद्धि होने से संपूर्ण पृथ्वी के तापमान में भी वृद्धि हो सकती है। इसे **'ग्लोबल वार्मिंग'** कहते हैं।
- यह एक वैज्ञानिक तथ्य है कि पृथ्वी का तापमान धीरे-धीरे बढ़ रहा है। इससे अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं। इसके परिणामस्वरूप ध्रुवीय क्षेत्रों की हिम चादरों के पिघलने से समुद्र तल में वृद्धि हो सकती है जिससे अनेक तटवर्ती क्षेत्र समुद्र की चपेट में आ सकते हैं। पृथ्वी पर तापीय परिस्थितियों में परिवर्तन से विभिन्न क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसलें भी प्रभावित हो सकती हैं। इसके साथ ही यह तर्क भी दिया जा सकता है कि तापमान बढ़ने से पौधों की वृद्धि दर भी बढ़ जाएगी तथा कार्बन डाईऑक्साइड की बढ़ी हुई मात्रा का उपयोग वनस्पति द्वारा कर लिया जाएगा। वास्तव में ग्लोबल वार्मिंग की संकल्पना काफी जटिल विषय है जिसके संदर्भ में अनेक प्रकार के विचार व्यक्त किए जा रहे हैं। परन्तु, अब अधिकतर वैज्ञानिक यह मान रहे हैं कि पिछले कुछ दशकों में भूतल तथा वायुमण्डल के तापमान में वृद्धि हुई है तथा भविष्य में इसके गंभीर परिणाम हो सकते हैं।
- वायुमण्डल में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की बढ़ती हुई मात्रा कोयले तथा खनिज तेल के बढ़ते हुए उपयोग तथा वन क्षेत्रों के विस्तार में कमी का परिणाम है। बढ़ती हुई जनसंख्या तथा बढ़ता हुआ जीवन स्तर इन परिस्थितियों का एक महत्वपूर्ण कारण है।

वायुमण्डलीय दाब (Atmospheric Pressure)

- पृथ्वी की एक निश्चित इकाई या क्षेत्रफल पर वायुमण्डल की सभी परतों द्वारा पड़ने वाला दबाव, वायुमण्डलीय दाब (Atmospheric Pressure) कहलाता है। इसे वायुदाबमापी या बैरोमीटर (Barometer) से मापा जाता है।

नोट :

- **बैरोमीटर के पठन में तेजी से गिरावट तूफानी मौसम का संकेत देती है।** बैरोमीटर के पठन का पहले गिरना, फिर धीरे-धीरे बढ़ना वर्षा की स्थिति का द्योतक है। बैरोमीटर के पठन का लगातार बढ़ना प्रति-चक्रवाती और साफ मौसम का संकेत होता है।

- धरातल की तुलना में समुद्रतल पर वायुदाब अधिक तथा पर्वतों पर कम होता है।
- वायुदाब और इसके वितरण को नियंत्रित करने वाले प्रमुख कारक तापमान, समुद्रतल से ऊँचाई, पृथ्वी का घूर्णन करना तथा वायु राशियों का ऊपर उठना और नीचे धँसना हैं।

वायुदाब की पेटियाँ (Pressure Belts)

- वायुमण्डलीय दाब के अक्षांशीय वितरण को वायुदाब का क्षैतिज वितरण कहते हैं। वायुदाब के क्षैतिज वितरण की मुख्य विशेषता वायुदाब कटिबंधों अथवा पेटियों का निर्माण है।
- विभिन्न अक्षांशों पर तापमान में अंतर तथा पृथ्वी के घूर्णन (Rotation) के प्रभाव से पृथ्वी पर वायुदाब के सात कटिबंध हैं। इनमें से भूमध्य रेखा पर निम्न दाब कटिबंध तथा ध्रुवों पर उच्च दाब कटिबंध, ताप प्रेरित कटिबंध (Thermally Induced Belts) है।

दोनों गोलार्द्धों में उपोष्ण उच्च वायुदाब कटिबंध तथा उपध्रुवीय निम्न वायुदाब कटिबंध, गति प्रेरित कटिबंध (Dynamically Induced Belts) हैं।

- इस प्रकार संपूर्ण पृथ्वी पर पाये जाने वाले सात कटिबंधों को चार समूहों में रखा जाता है—

(1) भूमध्य रेखीय निम्न दाब पेटी (Equatorial Low Pressure Belt)

- इस क्षेत्र का विस्तार 5° उत्तरी से 5° दक्षिणी अक्षांश के मध्य होता है। यह अत्यधिक निम्न वायुदाब का कटिबंध है। इस कटिबंध में धरातलीय क्षैतिज पवन नहीं चलती है क्योंकि इस कटिबंध की ओर आने वाली पवन इसकी सीमाओं के समीप पहुँचते ही गर्म होकर ऊपर उठने लगती हैं। यही कारण है कि इस कटिबंध में केवल ऊर्ध्वाधर (Vertical) वायुधाराएँ ही पायी जाती हैं। क्षैतिज पवन प्रवाह के अभाव में यहाँ शान्त वातावरण रहता है, जिसे **डोलड्रम** (Doldrum) या Region of Calm की उपमा प्रदान की जाती है।
- इस क्षेत्र में दोनों गोलार्द्धों में स्थित उपोष्ण कटिबंधों से आने वाली व्यापारिक पवनों का मिलन या अभिसरण (convergence) होता है, अत: इस मेखला को अन्तर उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (Inter-Tropical Convergence Zone—ITCZ) भी कहते हैं। इस कटिबंध में प्रतिदिन वर्षा होती है अत: इसका भी प्रभाव वायुदाब पर पड़ता है।

(2) उपोष्ण उच्च दाब पेटियाँ (Sub-Tropical High Pressure Belts)

- उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्धों में 30°– 35° अक्षांशों तक उच्च दाब पेटियाँ पायी जाती हैं। यहाँ उच्च वायु-भार होने के कारण हैं—
  - भूमध्य रेखीय कटिबंध से गर्म होकर ऊपर उठने वाली वायु धीरे-धीरे ठंडी व भारी होने लगती है और ऊपर पहुँचकर भू-घूर्णन के फलस्वरूप उत्तर तथा दक्षिणी दिशा में मुड़ जाती है। कर्क तथा मकर रेखाओं तक पहुँचते-पहुँचते यह वायु पूरी तरह घूमकर नीचे उतर आती है। इस वायु के भार से कर्क तथा मकर रेखाओं से 35° अक्षांशों के बीच उच्च वायुदाब उत्पन्न हो जाता है।
  - भू-घूर्णन के कारण ही उपध्रुवीय क्षेत्रों से वायु की विशाल राशियाँ इन प्रदेशों में एकत्रित हो जाती हैं, जिससे यहाँ पर उच्च दाब उत्पन्न हो जाता है।
- इन अक्षांशों पर वायु के नीचे उतरने के कारण वायु का क्षैतिज संचालन नहीं हो पाता जिस कारण वहाँ पर वायुमण्डल प्राय: शांत रहता है। इसलिए इसे भी **शांत कटिबंध (Belt of Calm)** कहते हैं।

नोट :

- इन अक्षांशों को **अश्व अक्षांश** (Horse Latitude) भी कहते हैं। इसका कारण यह है कि मध्य युग में यूरोप में खेती के लिए पश्चिमी द्वीप समूह में पालदार जलयानों को इन अक्षांशों के बीच वायु शांत रहने के कारण आगे बढ़ने में कठिनाई होती थी। अतः जलयानों का भार कम करने के लिए कुछ घोड़े समुद्र में फेंक दिए जाते थे।

(3) उपध्रुवीय निम्न दाब पेटियाँ (Sub-Polar Low Pressure Belts)

- 60°–65° उत्तरी तथा दक्षिणी अक्षांशों के बीच निम्न वायु भार की पेटियाँ पायी जाती हैं जिन्हें उपध्रुवीय निम्न दाब पेटियाँ कहते हैं। ये पेटियाँ भूमध्य निम्न दाब की पेटी से सर्वथा भिन्न हैं। इस क्षेत्र में निम्न वायुदाब होने के दो कारण हैं—
  - भू-घूर्णन के कारण वायु ध्रुवों से हटने लगती है और निम्न वायु-भार का एक छल्ला-सा बनने लगता है। परंतु ध्रुवों पर अत्यधिक शीत के कारण वहाँ उच्च वायु-भार बना रहता है। अत: वायु के हटने का प्रभाव उपध्रुवीय क्षेत्रों में पड़ता है और वहाँ कम वायु-भार होता है।
  - उपध्रुवीय क्षेत्रों में उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय प्रदेशों से गर्म जल धाराएँ बहती हैं। इससे ताप में वृद्धि तथा वायु तथा वायु-भार में कमी होती है।
- इस प्रकार यहाँ की निम्न वायु-भार पेटियाँ शीत तथा ताप दोनों से प्रेरित हैं। फिर भी उपर्युक्त दोनों कारणों में से पहला कारण अधिक तर्कसंगत लगता है।

(4) ध्रुवीय उच्चदाब पेटी (Polar High Pressure Belt)

- आर्कटिक तथा अंटार्कटिक वृत्तों से दोनों ध्रुवों तक वायुदाब बढ़ता जाता है। जिस प्रकार विषुवत् रेखा के निकट न्यून वायुदाब का कारण तापमान की अधिकता है, उसी प्रकार ध्रुवों के समीप उच्च वायुदाब का कारण तापमान की न्यूनता है।

समदाब रेखाएँ (Isobars)

- समदाब रेखाएँ वे कल्पित रेखाएँ हैं जो समान वायुदाब वाले स्थानों को मिलाती हैं।
- समदाब रेखाओं के बीच की परस्पर दूरियाँ वायुदाब में अंतर की दिशा और उसकी दर की दर्शाती हैं जिसे **दाब प्रवणता (Pressure Gradient)** कहते हैं। समदाब रेखाओं के पास-पास होने पर दाब प्रवणता अधिक तथा दूर-दूर होने पर दाब प्रवणता कम होती है। दाब प्रवणता को बैरोमीट्रिक ढाल भी कहते हैं।
- दाब प्रवणता के कारण वायु संचार होता है। यह दो प्रकार से होता है—(i) उच्च वायुदाब से निम्न वायुदाब की ओर लंबवत् रूप से चलने वाली वायु धाराएँ (Air Currents) तथा (ii) पृथ्वी तल के समानांतर क्षैतिज रूप से चलने वाली पवनें (Winds)। भू-विक्षेपी पवन (Geostrophic Wind) वह पवन है, जो समदाब रेखाओं के समानान्तर गतिशील रहती हैं।
- **पवन प्रकृति द्वारा वायुदाब की असमानताओं को दूर करने का प्रयास मात्र है।**

वायुदाब का वितरण

- धरातल पर वायुमण्डलीय वायुदाब और तापमान के बीच परस्पर उलटा संबंध होता होता है। परंतु ऊँचाई के साथ तापमान में गिरावट की तरह वायुदाब में भी गिरावट होती है।
- धरातल पर तापमान के असमान वितरण के कारण, वायुदाब का वितरण भी असमान है।
- वायुदाब का वितरण तापीय कारक के अतिरिक्त गतिज कारकों से भी प्रभावित होता है। वायुदाब के वितरण को नियंत्रित करने वाले गतिज कारकों में पृथ्वी का घूर्णन करना और वायु राशियों का ऊपर उठना और नीचे धंसना प्रमुख हैं। तापीय कारक के नियंत्रण के अंतर्गत तापमान विषुवत रेखा से ध्रुवों की ओर घटता जाता है तथा वायुदाब भूमध्य रेखा से ध्रुवों की ओर बढ़ता जाता है।
- इसके साथ ही गतिज कारणों से विषुवतीय क्षेत्रों से हवा को बाहर की ओर धकेला जाता है जबकि ध्रुवीय क्षेत्रों में हवा को केंद्र की ओर खींचा जाता है। गतिज कारकों के प्रभाव से ध्रुवीय क्षेत्रों में उच्च वायुदाब अधिक उच्च तथा विषुवत रेखीय क्षेत्रों में निम्न वायुदाब और निम्न हो जाता है। इस प्रकार भूमध्यरेखीय क्षेत्र में निम्न वायुभार तथा ध्रुवीय क्षेत्रों में उच्च वायुभार की पेटियों की उत्पत्ति होती है।
- विषुवतीय क्षेत्रों से वायु गर्म होकर लगातार ऊपर उठती रहती है और इस प्रकार ऊपर उठने वाली वायु 30° उत्तरी और दक्षिणी अंक्षाशों के लगभग नीचे उतरने से इन क्षेत्रों में उच्च वायुदाब पेटियों की उत्पत्ति होती है। पृथ्वी के घूर्णन के कारण ध्रुवीय क्षेत्र वायु को अपनी ओर खींचते हैं जिससे उपध्रुवीय क्षेत्रों में वायुमण्डल विरल होने लगता है। वायुमण्डल में इस विरलता के कारण उपध्रुवीय अक्षांशों में निम्न वायुदाब पेटियाँ, दोनों गोलार्द्धों में 60° उत्तर और दक्षिण के लगभग, विकसित होती हैं।
- अत: पृथ्वी पर कुल सात वायुदाब पेटियाँ पाई जाती हैं—भूमध्य रेखीय निम्न, उपध्रुवीय निम्न (दोनों गोलार्द्धों में) उपोष्ण कटिबंधीय उच्च (दोनों गोलार्द्धों में) और ध्रुवीय उच्च (दोनों गोलार्द्धों में)। वायुदाब के इस वितरण प्रारूप को वायुदाब का **ग्रहीय** (Planetary) **वितरण** कहते हैं।
- वायुदाब का यह वितरण दो कारकों के प्रभाव का परिणाम है—**तापीय कारक** और **गतिज कारक**। भूमध्य रेखीय निम्न वायुदाब पेटी और ध्रुवीय उच्च वायुदाब पेटियाँ मुख्यत: तापीय नियंत्रण के परिणाम हैं, जबकि उपोष्ण कटिबंधीय उच्च वायुदाब और उपध्रुवीय निम्न वायुदाब पेटियाँ मुख्यत: गतिज कारकों के परिणामस्वरूप बनती हैं।
- उपरोक्त वायुदाब पेटियों को **स्थाई वायुदाब पेटियाँ** भी कहा जाता है।

पवन-संचार

- पृथ्वी के धरातल पर वायुदाब की भिन्नता के कारण ही वायु में गति उत्पन्न होती है। इस गतिशील वायु को पवन (Wind) कहते हैं। अर्थात् 'पवन प्रकृति का वह प्रयत्न है जिसके द्वारा वायुदाब की असमानता दूर होती है।'
- पवनें अधिक दाब के क्षेत्र से कम दाब के क्षेत्रों की ओर बहती हैं। वायुदाब की भिन्नता (प्रवणता) के आधार पर पवनों की गति निर्भर करती है। वायुदाब में भिन्नता जितनी अधिक होती है, पवनें उतनी ही तीव्र गति से बहती हैं।

नोट :

- ब्यूफोर्ट स्केल (Beaufort Scale) का उपयोग वायु की गति अथवा वेग के मापन एवं आलेखन में किया जाता है।

- धरातल पर बहने वाली स्थायी पवनों की दिशा पर भू-घूर्णन (Rotation) का गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि पृथ्वी स्थिर होती, तो पवनें उत्तरी गोलार्द्ध में ठीक उत्तर से दक्षिण की ओर तथा दक्षिण गोलार्द्ध में दक्षिण से उत्तर की ओर बहतीं, परन्तु पृथ्वी अपने अक्ष पर झुकी रहकर अपनी धुरी पर पश्चिम से पूर्व की ओर घूर्णन करती है। उसकी घूर्णन गति पृथ्वी के सभी भागों में समान नहीं है। ध्रुवीय भागों की अपेक्षा भूमध्य रेखीय भागों की घूर्णन गति बहुत तीव्र है।
- पृथ्वी के साथ उससे सम्बद्ध सभी वस्तुएँ भी उसी गति से चलती हैं। अत: जब पवनें पृथ्वी की अधिक गति वाले भाग से कम गति वाले भाग की ओर आती हैं, तो वे आगे निकल जाती हैं, किन्तु जब वे कम गति वाले भाग से अधिक गति वाले भाग की ओर आती हैं तो पीछे छूट जाती हैं। फलस्वरूप पवनों की दिशा में परिवर्तन आ जाता है।
- पवन की दिशा में परिवर्तन लाने वाले इस बल को विक्षेप बल (deflection force) भी कहा जाता है, पर बाद में भूगोलवेत्ता जी.जी. कोरिऑलिस के नाम पर इसे **कोरिऑलिस बल** कहा जाने लगा। इसे **फैरल का नियम** भी कहते हैं। कोरिऑलिस बल के कारण ***उत्तरी गोलार्द्ध में*** *हवाएँ प्रवणता की दिशा से* ***दायीं ओर*** *तथा* ***दक्षिणी गोलार्द्ध में बायीं ओर*** *मुड़ जाती हैं।*
- यह नियम बड़े क्षेत्रों पर चलने वाली स्थायी पवनों, छोटे चक्रवातों और प्रतिचक्रवातों पर लागू होता है।

इस नियम का प्रभाव महासागरीय धाराओं, ज्वारीय गतियों, राकेटों, आदि पर भी देखा जाता है।

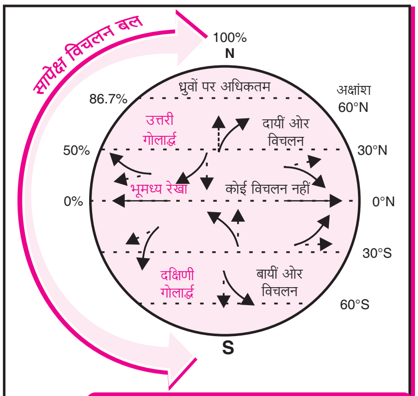

कोरिऑलिस बल द्वारा पवनों का विचलन

पवन के प्रकार

- हवाएँ मुख्य रूप से तीन प्रकार की होती हैं—स्थायी पवनें, सामयिक पवनें एवं स्थानीय पवनें।

◆ स्थायी पवनें (Regular/Primary Winds)

- इन्हें प्रचलित पवनें (Prevailing Winds) एवं सनातनी पवनें (Planetary Winds) भी कहते हैं।
- ये पवनें सदैव एक ही क्रम में वर्षभर एक निश्चित दिशा में बहती हैं।
- स्थायी पवनें तीन प्रकार की होती हैं—

(i) सन्मार्गी या व्यापारिक पवनें (Trade Winds)

- उपोष्ण उच्च दाब कटिबंधों से भूमध्य रेखीय निम्न दाब कटिबंध की ओर चलने वाली पवनों को सन्मार्गी पवनें कहते हैं। ये 30° से 5° उत्तर व दक्षिण अक्षांशों के बीच चलती हैं। इन्हें अंग्रेजी में Trade Winds कहते हैं। *Trade शब्द अंग्रेजी का नहीं, अपितु जर्मन भाषा का है जिसका अर्थ Track या निश्चित मार्ग है। तथापि ये व्यापारिक पवनों के नाम से अधिक जानी जाती हैं।*
- इन पवनों को उत्तरी गोलार्द्ध में उत्तर से दक्षिण तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिण से उत्तर दिशा में जाना चाहिए परन्तु फैरल के नियमानुसार कोरिऑलिस बल के प्रभावाधीन ये पवनें उत्तरी गोलार्द्ध में अपनी दाहिनी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में अपनी बाईं ओर मुड़ा जाती हैं। इस प्रकार ये पवनें उत्तरी गोलार्द्ध में उत्तर-पूर्वी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी-पूर्वी दिशा में चलती हैं। अत: प्राय: इन्हें पुरवा पवनें (Easterlies) या उष्णकटिबंधीय पूर्वी पवनें भी कहते हैं।
- लगभग 30° उत्तर तथा दक्षिण अक्षांशों से भूमध्य रेखा की ओर चलने के कारण ये पवनें गर्म व शुष्क हो जाती हैं। इसलिए ये पवनें प्राय: वर्षा नहीं करतीं। परन्तु जब ये किसी महासागर को पार करके महाद्वीपों तक पहुँचती हैं तो महाद्वीपों के पूर्वी भागों में खूब वर्षा करती हैं। परन्तु ये पवनें महाद्वीपों के पश्चिमी किनारों पर वर्षा नहीं करतीं।
- महासागरों के पूर्वी भाग में व्यापारिक पवनें ठण्डी समुद्री धाराओं के सम्पर्क में आने के कारण वर्षा नहीं करतीं।
- भूमध्य रेखा के निकट दोनों गोलार्द्धों की व्यापारिक पवनें आपस में टकराकर ऊपर को उठती हैं और घनघोर वर्षा करती हैं।
  भूमध्य रेखा के समीप दोनों ही गोलार्द्धों की व्यापारिक पवनों के अभिसरण वाले क्षेत्र को अंतर उष्णकटिबंधीय अभिसरण क्षेत्र (Inter Tropical Convergence Zone, ITCZ) कहते हैं। यह संवहन धाराओं से उत्पन्न निम्न वायुदाब का क्षेत्र है जिसे भूमध्यरेखीय द्रोणी (Equatorial Trough) के नाम से भी जाना जाता है।
- ये पवनें स्थायी व सुनियमित रूप से सुनिश्चित पथ पर चलती हैं और इनका वेग 15 से 25 किमी. प्रति घण्टा होता है। इनका वेग शीत ऋतु में अधिक और ग्रीष्म ऋतु में कम होता है।
- इनका अधिकतम विस्तार महासागरों पर होता है।
- हिन्द महासागर में ये पवनें मानसून पवनों में परिणित हो जाती हैं।

(ii) पछुआ पवनें (Westerlies)

- उपोष्ण उच्च दाब कटिबंधों से उपध्रुवीय निम्न दाब कटिबंधों की ओर बहने वाली पवनें पछुआ पवनें कहलाती हैं। ये विरुद्ध व्यापारिक पवनें भी कहलाती हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में इनकी दिशा दक्षिण-पश्चिमी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में उत्तर-पश्चिमी होती है।
- इन पवनों का प्रवाह उत्तरी गोलार्द्ध की अपेक्षा दक्षिणी गोलार्द्ध में अधिक स्थायी और निश्चित होता है। दक्षिणी गोलार्द्ध में 40°-65° अक्षांशों के बीच स्थलखण्ड न होने के कारण इन पवनों के प्रवाह-मार्ग में कोई रुकावट पैदा नहीं होती, और ये प्रचण्ड गति से बहती हैं। इसी कारण इस गोलार्द्ध में 40°-50° अक्षांशों के बीच इन्हें 'गरजते चालीसा' (Roaring Forties), 50° अक्षांशों में 'भयंकर पचासा' (Furious Fifties) और 60° अक्षांशों में 'चीखता साठा' (Shrieking Sixties) कहा जाता है।

(iii) ध्रुवीय पवनें (Polar Winds)

- ये ध्रुवीय उच्च दाब से उपध्रुवीय निम्न दाब की ओर चलती हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में इनकी दिशा उत्तर-पूर्वी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिण-पूर्वी होती है। ये पूर्वी पवनें होती हैं एवं उत्तरी गोलार्द्ध में इन्हें नॉर' ईस्टर्स (Nor' Easters) कहा जाता है।

- उपध्रुवीय निम्न वायुदाब के क्षेत्रों में ध्रुवीय एवं पछुआ पवनों जैसी विपरीत स्वभाव वाली पवनों के मिलने के कारण शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवातों का जन्म होता है।

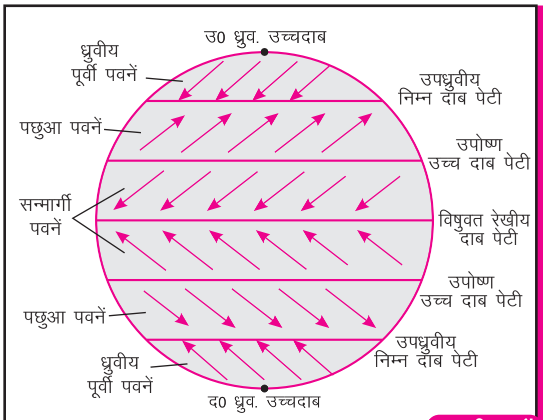

स्थायी पवनें

पवन की पेटियों का विस्थापन

- पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा यदि न करती तो वायुदाब तथा हवाओं की पेटियों में स्थायित्व हो सकता था, किन्तु पृथ्वी की वार्षिक गति के कारण उसकी सूर्य से सम्बन्धित स्थिति में परिवर्तन होता रहता है। फलत: व्यापारिक तथा पछुवा पवनों की पेटियाँ सूर्य की लाम्बिक किरणों में विस्थापन के साथ-साथ उत्तर तथा दक्षिण की ओर विस्थापित होती रहती हैं।
- 21 जून को सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत् होता है, जिस कारण सभी वायुदाब की पेटियाँ (ध्रुवीय उच्च दाब को छोड़कर) उत्तर दिशा में खिसक जाती हैं। भूमध्यरेखीय निम्न दाब 30° उत्तरी अक्षांश तक विस्तृत हो जाता है। इस कारण सम्बन्धित वायुदाब की पेटियाँ भी अपने निर्दिष्ट स्थान से खिसक जाती हैं।
- 21 जून के बाद 23 सितम्बर को सूर्य भूमध्यरेखा पर लम्बवत् चमकता है, जिस कारण वायु पेटियाँ अपनी यथावत् स्थिति में आ जाती हैं।
- इसके बाद सूर्य दक्षिणायन हो जाता है तथा 22 दिसम्बर को मकर रेखा पर लम्बवत् होता है, जिस कारण वायुदाब तथा वायु पेटियाँ दक्षिण की ओर खिसक जाती हैं।
- पुन: सूर्य के 21 मार्च को भूमध्यरेखा पर लम्बवत् होने के कारण ये पेटियाँ यथावत् स्थिति में आ जाती हैं।
- इस तरह ऋतु परिवर्तन के साथ ही वायु पेटियों में स्थानान्तरण होता रहता है, जिससे कई प्रकार की विशिष्ट जलवायु सम्बन्धी दशाओं का सूत्रपात होता है। जैसे—भूमध्यसागरीय जलवायु, 60°-70° अक्षांशों के मध्य वर्ष में दो प्रकार के हवाओं का आगमन तथा मानसून हवाओं का आर्विभाव।

नोट :

- जल और स्थल के तापन की विशेषताओं में अंतर के फलस्वरूप महाद्वीपों और महासागरों पर वायुदाब और तापमान में भिन्नता पाई जाती है। इसलिए **महासागरों की अपेक्षा महाद्वीपों पर वायुदाब तथा पवनों की पेटियों का स्थानांतरण अधिक होता है।** अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा उष्णकटिबंधीय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों की वायुदाब तथा पवन पेटियों का स्थानांतरण अधिक होता है।

◆ सामयिक पवनें (Periodical Winds)

- मौसम और समय परिवर्तन के साथ जिन पवनों की दिशा में परिवर्तन हो जाता है उन्हें सामयिक पवन कहते हैं।
- मौसम के आगमन और गमन तथा समय से इनका प्रत्यक्ष संबंध होता है या ये भी कहा जा सकता है कि ये मौसम से तथा मौसम इनसे प्रभावित होता है। मानसून पवनें सामयिक पवनों का सर्वोत्तम उदाहरण हैं।

मानसून

- मौसम के अनुसार अपनी दिशाओं को बदलने वाली पवन मानसून कहलाती है। वस्तुत: मानसून शब्द अरबी भाषा के 'मौसिम' शब्द से बनाया गया है, जिसका अर्थ होता है मौसम।
- ये पवनें ग्रीष्म ऋतु के छ: माह, समुद्र से स्थल की ओर चलती हैं तथा शीत ऋतु के छ: माह, स्थल से समुद्र की ओर प्रवाहित होती है। ऐसा स्थल व जल के गर्म होने की अलग-अलग प्रवृत्ति के कारण होता है। इनकी उत्पत्ति कर्क व मकर रेखाओं के बीच की सन्मार्गी पवनों की पेटी में होती है।

◆ स्थानीय पवनें (Local Winds)

- जिन पवनों का विकास स्थानीय स्तर पर तापमान एवं वायुदाब में अंतर के कारण होता है उन्हें स्थानीय पवन कहते हैं।
- स्थानीय पवनों का सम्बन्ध क्षोभमण्डल की निचली पर्तों तक ही सीमित रहता है।

(i) समुद्र समीर

- दिन में जल की अपेक्षा स्थल जल्दी गर्म हो जाता है, अत: वहाँ निम्न दाब विकसित हो जाता है। समुद्र अपेक्षाकृत कम गर्म रहता है, अत: वहाँ उच्च दाब रहता है, फलत: समुद्री उच्च दाब से स्थलीय निम्न

दाब की तरफ हवा प्रवाहित होने लगती है। यह हवा समुद्रतटीय क्षेत्रों के तापमान और आर्द्रता को प्रभावित करती है। समुद्री समीर दिन में ही प्रवाहित होता है।

(ii) स्थल समीर

- स्थल समीर रात को बहता है। रात में सूर्य की अनुपस्थिति में धरातल का तापमान विकिरण के कारण जल्दी घटने लगता है, जबकि समुद्र धरातल की तुलना में अपेक्षाकृत गर्म रहता है, अत: समुद्र पर निम्न दाब तथा धरातल पर उच्च दाब बन जाता है और रात में स्थलीय उच्च दाब से समुद्री निम्न दाब की ओर हवा प्रवाहित होने लगती है।
- जलीय समीर की अपेक्षा स्थलीय समीर क्षीण होती है। ये हवाएँ शुष्क होती हैं। इन दोनों समीरों के कारण तटीय भागों की जलवायु पर समकारी (Moderate) प्रभाव होता है—यानि तटीय भागों में न अधिक जाड़ा पड़ता है और न ही अधिक गर्मी।

(iii) पर्वत समीर, घाटी समीर

- ये पवनें भी तापमान के दैनिक परिवर्तन के कारण उत्पन्न होती हैं। रात्रि के समय पर्वत शिखर से जो पवनें घाटी के तल की ओर चलती हैं, उन्हें पर्वतीय समीर कहा जाता है। दिन के समय जो पवनें घाटी के तल से पर्वत शिखर की ओर बहती हैं, उन्हें घाटी समीर कहा जाता है।
- सूर्योदय के साथ सूर्य की किरणें सर्वप्रथम पर्वत शिखरों का स्पर्श करती हैं। इसी कारण घाटी की अपेक्षा वे शीघ्र गर्म हो जाते हैं तथा संवहन के कारण उनकी वायु ऊपर उठ जाती है। परिणामस्वरूप घाटी के तल से अपेक्षाकृत ठण्डी पवनें शिखर की ओर आने लगती हैं। इन्हें घाटी समीर कहते हैं जबकि रात्रि के समय तीव्र विकिरण के कारण पर्वत-शिखर शीघ्र ठण्डा हो जाता है तथा घाटी अपेक्षाकृत गरम रहती है। फलत: पर्वत-शिखर की वायु सघन तथा भारी होने के कारण नीचे उतरती है, जिसे पर्वतीय समीर कहते हैं।

नोट :

- गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से ऊँचे क्षेत्रों से ठंडी वायु नीचे स्थानों की ओर बहती है। इस प्रकार चलने वाली पवनों को **कैटाबेटिक** अथवा **अपवाही पवनें** कहते हैं। इसलिए पर्वत समीर को कैटाबेटिक समीर भी कहा जा सकता है।

कुछ महत्त्वपूर्ण स्थानीय पवनें

स्थानीय पवन	प्रकृति	स्थान का नाम
लू	गर्म व शुष्क	उत्तरी भारत-पाकिस्तान
हबूब	गर्म व शुष्क	सूडान
चिनूक या Snow eater	गर्म व शुष्क	रॉकी पर्वत (उत्तरी अमेरिका) के पूर्वी ढाल
फॉन	गर्म व शुष्क	उत्तरी आल्पस
गिबली	गर्म व शुष्क	लीबिया
बर्गस	गर्म व शुष्क	दक्षिण अफ्रीका
काराबुरॉन	गर्म व शुष्क	तारिम बेसिन (उत्तर-पश्चिमी चीन)
हरमटन	गर्म व शुष्क	पश्चिम अफ्रीका
सिरॉको	गर्म व शुष्क	सहारा मरुस्थल
सिमूम	गर्म व शुष्क	अरब मरुस्थल
ब्रिक फील्डर	गर्म व शुष्क	ऑस्ट्रेलिया
खमसिन	गर्म व शुष्क	मिस्र
सोलानो	गर्म व आर्द्रतायुक्त	सहारा
नॉर्वेस्टर	गर्म व शुष्क	न्यूजीलैंड
सांता एना	गर्म व शुष्क	कैलीफोर्निया
शामल	गर्म व शुष्क	इराक, ईरान
जोंडा	गर्म व शुष्क	अर्जेंटीना
मिस्ट्रल	ठंडी व शुष्क	फ्रांस
ट्रेमोण्टाना	ठंडी व शुष्क	स्पेन, क्रोएशिया, फ्रांस, ग्रीस, इटली
जोरान	ठंडी	जूरा पर्वत से जेनेवा झील
नॉर्दर	ठंडी व शुष्क	टेक्सास (सं.रा. अमेरिका)
बुरान	गर्मियों में गर्म, सर्दियों में ठंडी	रूस एवं मध्यवर्ती एशिया
बोरा	ठंडी व शुष्क	इटली, क्रोएशिया, मोन्टेनीगरो, बुल्गारिया, ग्रीस, स्लोवेनिया, पोलैंड, रूस, तुर्की
ब्लिजर्ड	ठंडी	टुंड्रा प्रदेश
लेवेंटर	ठंडी व आर्द्रतायुक्त	स्पेन

फ्राइजेम	ठंडी	ब्राजील
पापागयो	ठंडी व शुष्क	मैक्सिको
पुनाज	ठंडी व शुष्क	एंडीज पर्वत के पश्चिमी ढाल
पुर्गा	ठंडी व शुष्क	साइबेरिया
पैम्पेरो	ठंडी व शुष्क	अर्जेंटीना व उरुग्वे के पम्पास मैदान

नोट :

- चिनूक रॉकी पर्वत के पूर्वी ढालों पर नीचे की ओर बहने वाली पवन है जिसके द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका के मैदानी भागों में तेजी से बर्फ बिघलती है। इसी कारण इसे कभी-कभी **snow-eater** भी कहा जाता है।
- चिनूक पवन पशुपालकों के लिए लाभदायक होती हैं। इसके आगमन से चरागाह बर्फमुक्त हो जाते हैं।
- हरमटन पवन, जो सहारा रेगिस्तान में पूर्व से पश्चिम की ओर चलती है, इतनी गर्म व शुष्क होती है कि वृक्षों के तनों में दरार तक पैदा कर देती है।
- हरमटन गिनी तट पर नम ऊष्मा से लोगों को आराम देती है जिससे वे स्वास्थ्यपद हो जाते हैं। इसी के फलस्वरूप इसे **गिनी डॉक्टर** या **डॉक्टर विंड** भी कहते हैं।
- फॉन पवन के प्रभाव से उत्तरी आल्पस की घाटियों में (सर्वाधिक प्रभाव स्विट्जरलैण्ड में) बर्फ पिघल जाती है और मौसम सुहाना हो जाता है। इसके प्रभाव से अंगूर की फसल शीघ्र पक जाती है।

चक्रवात (Cyclones)

- अस्थिर एवं परिवर्तनशील हवाओं के वायुमण्डलीय भँवर जिनके केंद्र में निम्न वायुदाब और केंद्र के बाहर उच्च वायुदाब होता है, चक्रवात (Cyclones) कहलाते हैं।
- चक्रवात आकार में गोलाकार, अंडाकार या V अक्षर के समान होता है।
- चक्रवात की दिशा उत्तरी गोलार्द्ध में घड़ी की सूईं के विपरीत (Anticlockwise) होती है तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में घड़ी की सूईं की दिशा में (Clockwise) होती है।
- चक्रवात दो प्रकार के होते हैं—शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात व उष्ण कटिबंधीय चक्रवात।

◆ शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवात (Temperate Cyclones)

- ये 30° से 65° अक्षांशों के मध्य उत्पन्न होते हैं। यहाँ पर ध्रुवीय क्षेत्रों से आने वाली शीतल व भारी वायुराशि तथा विषुवतीय क्षेत्रों से जाने वाली उष्ण वायुराशियों के मिलने से इन चक्रवातों की उत्पत्ति होती है।
- ये चक्रवात महाद्वीपों पर विकसित होते हैं तथा शीतकाल में ये अधिक प्रबल होते हैं क्योंकि इस समय ध्रुवीय वायुराशियों और उपोष्ण वायुराशियों के तापमान में अधिकतम अंतर होता है। शीतोष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों की ऊर्जा का मुख्य स्रोत उनके विकास में सम्मिलित वायुराशियों के तापमान का अंतर होता है।

◆ उष्णकटिबंधीय चक्रवात (Tropical Cyclones)

- इनका जन्म कर्क रेखा व मकर रेखा के बीच होता है। यहाँ पर अत्यधिक तापमान से निम्न दाब का क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है, जिससे इनकी उत्पत्ति होती है।
- उष्णकटिबंधीय चक्रवातों के विकास के लिए उष्णकटिबंधीय समुद्र और महासागर सबसे अनुकूल क्षेत्र होते हैं। इनकी ऊर्जा का मुख्य स्रोत संघनन की गुप्त ऊष्मा होती है।
- यद्यपि इनका क्षेत्रफल शीतोष्ण कटिबंधीय चक्रवातों से कम होता हैं तथापि ये अपनी गति एवं तूफानी स्वभाव के कारण अत्यन्त विनाशकारी होते हैं। इनका आकार छोटा, किंतु तीव्रता सर्वाधिक होती हैं। ये चक्रवात सागरों के ऊपर तेज चलते हैं, परन्तु स्थलों पर पहुँचते-पहुँचते क्षीण हो जाते हैं तथा आन्तरिक भागों में पहुँचने से पहले ही समाप्त हो जाते हैं। ये चक्रवात वर्ष के निश्चित समय में ही आते हैं, खासकर ग्रीष्मकाल में।

नोट :

- उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों के केंद्र में 6 से 48 किमी. का एक ऐसा क्षेत्र होता है, जहाँ हवाएँ एकदम शांत रहती हैं तथा वहाँ वर्षा नहीं होती है, इसे चक्रवात का चक्षु (Eye of the Storm) कहते हैं।
- टॉरनेडो (Tornado) सबसे छोटा उष्ण कटिबंधीय चक्रवात है, लेकिन सबसे ज्यादा प्रभावकारी है। इससे काफी बड़े स्तर पर तबाही मचती है। इसकी आकृति कीपाकार होती है, अर्थात् ये धरातल पर संकरे तथा ऊपर वायुमण्डल में विस्तृत होते चले जाते हैं। टॉरनेडो की सबसे बड़ी विशिष्टता है इनमें हवाओं की गति, जो 480 से 517 किमी. प्रति घंटा तक होती है।

- चक्रवातों के भिन्न स्थानों पर भिन्न नाम होते हैं—

चक्रवात (Cyclone)	हिंद महासागर
हरीकेन (Hurricane)	कैरिबियन द्वीप समूह
टायफून (Typhoon)	दक्षिणी चीन सागर
विली-विलीज (Willy-Willies)	आस्ट्रेलिया
टॉरनेडो (Tornadoes)	तटीय अमेरिका
ट्विस्टर (Twister)	स्थलीय अमेरिका